# भ्रम

## भाग - १

**'भ्रम'** किसी वस्तु के विषय में –

सुना – सुनाया
पढ़ा – पढ़ाया
समझा – समझाया
ऊपरी
अधूरा
गलत

**दृढ किया हुआ –**

ख्याल
सूझ
जानकारी
ज्ञान
**निश्चय**

है, जो उस **'वस्तु'** की **'वास्तविकता' या हकीकत से विपरीत हो ।**

यह मानसिक **'भ्रम'** कई किस्मों, सतहों, दर्जो में प्रवृत्त है ।

दूसरे शब्दों में संसार में **अनेकों 'भ्रमों' का बोलबाला और व्यवहार है ।**

प्रभु की सृष्टि में दो मंडल हैं –

1. **आत्मिक मंडल** अथवा 'निर्गुण स्वरूप'
2. त्रिगुणी **मायिकी मंडल** अथवा 'सर्गुण स्वरूप'

आत्मिक मंडल में **आत्मिक तत् – ज्ञान का स्व – प्रकाश है ।**

जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश में 'अँधकार' की **अनुपस्थिति** है, अर्थात 'अँधकार' हो नहीं सकता, इसी प्रकार आत्मिक मंडल के प्रकाश में 'भ्रम' का अँध कार हो ही नहीं सकता । दूसरे शब्दों में **'आत्म – प्रकाश' की अनुपस्थिति या गैर हाजरी को ही 'भ्रम' कहा गया है ।**

बाझु गुरू गुबारु है बिनु सबदै बूझ न पाइ ।। (पृ. ५५)

**'शबद'** अथवा **'नाम'** ही एकमात्र, सत्य, अटल, सर्वज्ञ आत्म – प्रकाश है जिस के **तेज से ही भ्रम का अँध – गुबार मिट सकता है** और आत्म तत् – ज्ञान की अनुभवी सूझ हो सकती है ।

जिस तरह सूर्य उदय होने से काली अन्धेरी 'रात' और उस से उत्पन्न हुआ 'अँधकार' अपने आप अलोप हो जाता है, निकालना या ढकेलना नहीं पड़ता । इसी तरह हृदय में **'नाम का सूर्य' उदय होने से** त्रिगुणी मायिकी मंडल, और उस से उत्पन्न हुआ अज्ञानता रूपी **'भ्रम का अँधकार' अपने आप अलोप हो जाता है,** और सब तरफ, चारों ओर, ओत प्रोत, 'नाम' के प्रकाश की रोशनी हो जाती है । इस आत्मिक रोशनी के 'प्रकाश' अथवा **'अनुभव प्रकाश के साथ तत् – ज्ञान प्राप्त हो जाता है** और हर जरह के मानसिक **भ्रम – भुलावे सहज – स्वभाव मिट जाते हैं ।**

दीवा बलै अंधोरा जाइ ।। बेद पाठ मति पापा खाइ ।।
उगवै सूरु न जापै चंदु ।। जह गिआन प्रगासु अगिआनु मिटंतु ।। (पृ. ७६१)

इस बात को स्पष्ट रूप से समझने के लिए, **'अँधों का हाथी के विषय में ज्ञान'** वाला उदाहरण ठीक उतरता है । जन्म से अंधों का 'हाथी' अथवा हर एक चीज़ के विषय में –

ख्याल
सूझ
जानकारी
विचार
ज्ञान
निश्चय

उनके –

सुने – सुनाये
समझे – समझाये
छोह की सूझ
टोह की जानकारी

द्वारा **प्राप्त की हुई दिमागी कल्पना पर 'आधारित' है ।** ऐसा **अलग – अलग मनोकल्पित ज्ञान** या निश्चय –

ऊपरी
अधूरा
गलत
विपरीत
उलट

होना स्वभाविक और अनिवार्य है । इस को ही **'भ्रम' अथवा 'वहम' कहा जाता है ।**

बजर कपाट काइआ गड् भीतरि कूडु कुसतु अभिमानी ।।
भरमि भूले नदरि न आवनी मनमुख अंध अगिआनी ।। (पृ. ५१४)

**माधवे किआ कहीऐ भ्रम ऐसा ।।**
**जैसा मानीऐ होइ न तैसा ।। रहाउ ।।**
नरपति एकु सिंघासनि सोइआ सुपने भइआ भिखारी ।।
उछत राज बिछुरत दुखु पाइआ सो गति भई हमारी ।। (पृ. ६५७)

परमात्मा ने अपनी मौज में – **'कवाओ'** द्वारा, यह **सर्गुण स्वरूप मायिकी मंडल** की रचना की एवं इस में अपनी **'ज्योति'** रख कर अनगिनत जीव बनाए । इन जीवों के **मन के ऊपर अहम् का गिलाफ या पर्दा चढ़ा होने के कारण** इन को अपनी – अपनी **'अलग हस्ती'** महसूस होती है ।

**हउमै विचि सभु जगु बउराना ।।**
**दूजै भाइ भरमि भुलाना ।।** (पृ. १५६)

त्रै गुण माइआ भरमि भुलाइआ हउमै बंधन कमाए ।। (पृ. ६०४)

हउमै मेरा भरमै संसारु ।। (पृ. ८४१)

**दूजै भरमि भुलाइआ हउमै दुखु पाही ।।** (पृ. १०६१)

इस बात को स्पष्ट करने के लिए बिजली के बल्बों (bulbs) का उदाहरण सही होगा –

इन बल्बों में एक ही बिजली का करंट (current) चल रहा होता है, परन्तु बल्ब अनेक रंगों, शक्लों और आकारों के होते हैं, जिस के द्वारा अनेक रंगों की राशनी, जैसे कि लाल, पीली, हरी, नीली आदि प्रकाशित होती है ।

यदि **'बल्ब'** यह समझे, कि यह रंगीन रोशनी **मेरी 'अपनी' है** तो उसका यह दावा –

भूल है
**भूलाव है**
**भ्रम है**
खोखला है
झूठा है

और अपने 'मूल' करंट (current) या जीवन रौं को –

भूलना है
विमुख होना है
अश्रद्धक होना है
**इनकार करना है**

ठीक इसी तरह सारे 'जीवों' में **एक ही 'प्रभु ज्योति' काम करती है** – जिस द्वारा जीव की 'हस्ती' और 'प्रकृति' चल रही है। परंतु, जीव अपने अहम् के कारण 'मूल' ईश्वरीय 'ज्योति' को 'भूल' गया है और अपनी अलग **झूठी हस्ती को ही असली 'हस्ती' समझे हुए है।** जिस कारण अपने कूड़ **'अहम' के भ्रम की 'धुरी'** (axle) **के आस–पास सारी उम्र घूमता, कर्म करता और परिणाम भोगता है।**

त्रै गुण वरतहि सगल संसारा हउमै विचि पति खोई ।। (पृ. ६०४)

छनिछरवारि सउण सासत बीचारु ।। **हउमै मेरा भरमै संसारु ।।**
मनमुखु अंधा दूलै भाइ ।। जम दर बाधा चोटा खाइ ।।(पृ. ८४१)

वास्तव में, जब अकाल पुरूष के **'कवाओ'** द्वारा **'माया'** की रचना हुई तो –

**अहम्**
**द्वैत भाव**
**मैं–मेरी**
**अपने–पराए**

की भावना से **'भ्रम' उत्पन्न हुआ** और यूँ यह **'भ्रम–भुलाव'** कायनात के आरंभ से ही प्रचलित है।

**जिनि रचि रचिआ पुरखि बिधातै नाले हउमै पाई ।।** (पृ. ६६६)

हउमै सभु सरीरु है हउमै ओपति होइ ।।
हउमै वडा गुबारु है हउमै विचि बुझि न सकै कोइ ।। (पृ. ५६०)

जगि हउमै मैलु दुखु पाइआ मलु लागी दूजै भाइ ।। (पृ. ३६)

इस लिए यह 'भ्रम – भुलाव' अनेकों जनमों से हमारे –

मनों में
हृदयों में
दिमाग में
अंतःकरण में

**धस – बस – रस – समा कर चिपका हुआ है और हमारे जीवन का अभिन्न 'अंग' और 'आधार' बन चुका है ।**

इस तरह यह 'भ्रम' हमारे जीवन के हर पक्ष अथवा –

ख्याल
सोच
कल्पना
सूझ
जानकारी
सियानपें
विद्या
ज्ञान
विज्ञान
फिलोस्फी
मनोभाव
निश्चय
कर्म
धर्म

**में प्रवृत है**, और हमारे जीवन में इसी मूल दृढ़ भ्रम का ही बोल – बाला और व्यवहार है ।

परंतु हैरानी की बात है कि हम जिन **'भ्रम – भुलावों'** में प्रवृत हैं, उन **भ्रम – भुलावों से बिलकुल** –

अज्ञात/अनभिज्ञ
अन्जान

अज्ञानी

लापरवाह

बेपरवाह या

मस्त

बने हुए हैं। यहाँ तक कि हम अपनी इस **'भ्रम–मयी' अवस्था को मानने के लिए भी तैयार नहीं ।**

बजर कपाट काइआ गड् भीतरि कूडु कुसतु अभिमानी ।।
भरमि भूले नदरि न आवनी मनमुख अंधा अगिआनी ।। (पृ –५१४)

गुरबाणी में हमारी इस **भ्रम–मयी अवस्था** को यूँ दर्शाया गया है –

**ऐसा तैं जगु भरमि लाइआ ।।**
**कैसे बूझै जब मोहिआ है माइआ ।।** (पृ –६२)

भरमे आवै भरमे जाइ ।।
इहु जगु जनमिआ दूजै भाइ ।। (पृ–१६१)

**ओहु जु भरमु भुलावा कहीअत**
**तिन महि उरझिओ सगल संसारा ।।** (पृ –६११)

सगल जनम भरम ही भरम खोइओ नह असथिरु मति पाई ।। (पृ ६३२)

हमारे सामने सारी **दृष्टमान चीज़ें बदलती और नाश होती रहती है ।**

जो दीसै सो सगल बिनासै जिउ बादर की छाई ।। (पृ २१९)

यह **'समस्त संसार'** भी कई बारी बना और नाश हुआ है –

कई बार पसरिओ पासार ।।
सदा सदा इकु एकंकार ।। (पृ २७६)

इस लिए गुरबाणी में इस संसार को –

गतिमान

नाशवंत

झूठा

कूड़

वृक्ष की छाया

सहसा रूप (भ्रम)
धुएँ का पहाड़
भ्रम–गढ़

आदि, कह के वर्णन किया गया है –

सहसा इहु संसारु है मरि जंमै आइआ जाइआ ।। (पृ. १३८)

इहु संसारु सभु आवण जाणा मन मूरख चेति अजाणा ।। (पृ. ६०७)

जग झूठे कउ साचु जानि कै ता सिउ रुच उपजाई ।। (पृ. ७१८)

इहु जगु धूए का पहार ।। तै साचा मानिआ किह बिचारि ।। (पृ. ११८७)

**परंतु, 'धुर की बाणी' के इन उपदेशों को –**

पढ़ कर
सुन कर
समझ कर
विचार कर
व्याख्या करके

**भी, हमारा मन झूठे संसार को सच करके माने हुए है ।** हम अपने अंतःकरण की रंगत अनुसार, **'इह जग मिट्ठा', अगला किन डिट्ठा'** वाले भ्रम – भुलाव के प्रभाव में –

**झूठी दुनीआ लगि न आपु कजाईऐ ।।** (पृ. ४८८)

वाली **ताड़ना से बेपरवाह होकर, इस झूठी दुनिया को 'सच' करके माने हुए हैं** और इसी में ही अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ खो रहे हैं ।

पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ।। (पृ. १३३)

मनमुख दुरवीए सदा भ्रमि भुले तिन्ी बिरथा जनमु गवाइआ ।। (पृ. ८५२)

**'रेशम का कीड़ा'** अपने में से निकली तार से, पहले अपने **चारों ओर** 'खोल' (cone) बना लेता है और फिर उसी बंद खोल को अंदर अपने में से **निकली तार का जाल बनाता रहता है और उसी में मर जाता है ।**

इसी तरह 'जीव' अपने चारों ओर अहम् का खोल' बनाकर, अपने कर्मो के फँदों में फँस जाता है एवं कर्मबद्ध होकर पलच – पलच के मर जाता है ।

जो जो करम कीओ लालच लगि तिह तिह आपु बंधाइओ ।। (पृ ७०२)

आम भोली – भाली जनता ने तो इस मायिकी भ्रम में गलतान होना ही है, परंतु हम पढ़े – लिखे, सियाने विद्वान और विज्ञानी भी इस **सूक्ष्म दिमागी भ्रम के अँध कार में ही गोते खा रहे हैं ।**

इस **भ्रम – गढ़ के अँधकार – खाते में ही, हम –**

जन्म लेते
जीते
विचरण करते
कर्म करते
फलते
दुख भोगते
मरते
नर्क भोगते
फिर जन्म लेते

हुए, युग – युगांतरों से **कई जन्म भोग चुके हैं ।**

भरमहि जोनि असंख मरि जनमहि आवही ।। (पृ ७०५)

**परंतु बावजूद इतने –**

धर्मो
मज़हबों
ज्ञान
प्रचार
फिलास्फियाँ
कर्म – क्रिया
योग – अभ्यास

के हमें अभी तक इस मानसिक 'भ्रम – भुलाव' की –

सूझ
पहचान
ज्ञान
निश्चय

**ही नहीं आया** !!!

सगल जनम भरम ही भरम खोइओ नह असथिरु मति पाई ।। (पृ. ६३२)

करम धरम भै भरम विचि बहु जंमण मरणे । (वा. भ. गु. ३८/१२)

किंतु आश्चर्य वाली बात तो यह है, कि गुरबाणी में इस भ्रम के विषय में इतनी **व्याख्या एवं ताड़ना के बावजूद** हमें इस बात का निश्चय ही नहीं आया कि हम भी उसी अहम् के भ्रम – भुलाव के अँधकार में ही फँसकर दुखी जीवन बिता रहे हैं ।

इस का कारण यह है कि चाहे हम गुरबाणी को माथा टेकते हैं और गुरू मानते हैं, परंतु वास्तव में गुरबाणी में दर्शाए आत्मिक 'तत् – ज्ञान' अथवा 'आत्म – प्रकाश' पर हमें निश्चय ही नहीं आया या उपरी सा दिमागी विश्वास होता है, जो **माया के थोड़ी सी चमक** से ही उड़ जाता है ।

वास्तव में आत्मिक प्रकाश रूप मंडल से हम बिल्कुल अनजान एवं बेखबर हैं अथवा जान – बूझ कर 'मचले हुए' हुए है या ऊपरी सी 'हामी' भर देते हैं । हम रेशम के कीड़े की तरह, अपने अहम् के अँध – गुबार अथवा **'भ्रम – गढ़' में इतनी बुरी तरह कैद हैं, कि किसी आत्मिक – प्रकाश की हस्ती का ख्याल या विश्वास ही नहीं आता ।** इस लिए धर्म अथवा परमार्थ के विषय में हम **'ठाठा – बागा' ही कर छोड़ते हैं** और अपने आप को धोखा देते हैं कि हम धार्मिक हैं ।

इसी कारण हम अपने 'भ्रम – भुलाव' के अँधकार – खाते में –

| | | |
|---|---|---|
| सच | को | झूठ |
| झूठ | को | सच |
| विनाशमयी | को | स्थिर |
| अटल | को | गतिमान |
| पराये | को | अपना |
| अपने | को | पराया |
| पास | को | दूर |
| दूर | को | पास |
| अँधकार | को | प्रकाश |
| प्रकाश | को | अँधकार |
| मृत्यु | को | जीवन |
| जीवन | को | मृत्यु |

आदि समझ कर अपना **अमूल्य जीवन व्यर्थ खो रहे हैं ।**

जो पराइओ सोई अपना ।। जो तजि छोडन तिसु सिउ मनु रचना ।।
कहहु गुसाई मिलीऐ केह ।। जो बिबरजत तिस सिउ नेह ।। रहाउ ।।
**झूठु बात सा सचु करि जाती ।। सति होवनु मनिलगै न राती ।।**
बावै मरगु टेढा चलना ।। साधा छोडि अपूठा बुनना ।। (पृ. १८५)

खोटे कउ खरा कहै खरे सार न जाणै ।।
अंधे का नाउनारखू कली काल विडाणै ।।
सुते कउ जागतु कहै जागत कउ सूता ।।
जीवत कउ मूआ कहै मूए नहीं रोता ।।
आवत कउ जाता कहै जाते कउ आइआ ।।
पर की कउ अपुनी कहै अपुनो नही भाइआ ।।
मीठे कउ कउड़ा कहै कडूए कउ मीठा ।।
राते की निंदा करहि ऐसा कलि महि डीठा ।।
चेरी की सेवा करहि ठाकुरु नही दीसै ।।
पोखरु नीरु विरोलीऐ माखुन नही रीसै ।। (पृ. २२६)

**ऐसे काहे भूलि परे ।।**
करहि करावहि मूकरि पावहि पेखत सुनत सदा संगि हरे ।। रहाउ ।।
काचबिहाझन कंचन छाडन बैरी संगि हेतु साजन तिआगि खरे ।।
होवनु कउरा अनहोवनु मीठा बिखिआमहि जपटाइ जरे ।।
अंध कूप महि परिओ परानी भरम गुबार मोह बंधि परे ।।
कहु नानक प्रभ होत दइआरा गुरु भेटै काढै बाह फरे ।। (पृ. ८२३)

यह 'भ्रम' केवल इन्सानों तक ही सीमित नहीं अपितु **'सुरि नर' मुनि जन और 'देवी – देवताओं' को भी अचेत ही चिपका हुआ है ।**

पुरातन समय में 'देवी – देवताओं' की गाथाओं से सिद्ध होता है कि वह भी त्रिगुण **मैं – मेरी अथवा ईर्ष्या – द्वेष के द्वैत – भाव के भ्रम – भुलाव से बच नहीं सके,** जिस कारण वह एक दूसरे से **ईर्ष्या वश झगड़ते रहते थे ।**

**भरमे सुरि नी देवी देवा ।।**
**भरमे सिध साधिक बहमेवा ।।** (पृ. २५८)

**बहमा बिसनु महादेउ त्रै गुण भूले हउमै मोहु वधाइआ ।।**
पंडित पड़ि पड़ि मोनी भूले दमजै भाइ चितु लाइआ ।।
जोगी जंगम संनिआसी भुले विणु गुर ततु न पाइआ ।। (पृ. ८५२)

**इसी 'सूक्ष्म अहम्' के 'भ्रम' में धर्म के नाम पर –**

ईर्ष्या
द्वेष
जलन
लोभ
तअस्सुब
पक्षपात
वाद – विवाद
झगड़े
लड़ाइयाँ
जुल्म

**का बोल – बाला और व्यवहार हो रहा है ।**

आश्चर्य की बात तो यह है, कि **बावजूद इतनी विद्या, विज्ञान, धार्मिक ज्ञान और तीक्षण – बुद्धि के हमें अपने त्रि – गुणी मानसिक 'भ्रम' का अहसास ही नहीं हो सका अथवा सूझ ही नहीं आई** !!

याद रखने वाली बात तो यह है कि त्रि – गुणी मायिकी मंडल का 'भ्रम' भूत – प्रेत की तरह, कोई **अदृष्ट वजूद हस्ती नहीं । अज्ञानता के अँधकार को ही 'भ्रम' कहा गया है, जो हमारे जीवन के हर पक्ष में अपने – आप प्रक्ट होता रहता है ।**

**त्रि – गुणी मायिकी मंडल में, अहम् के अँधकार में –**

ख्यालों की रंगत
मन की कल्पना
बुद्धि का ज्ञान
हृदय के मनोभाव
मनोभाव के तरंग
तरंगों की उड़ाने
कर्म – धर्म

आदि, **सब कुछ भ्रम – भुलाव के अँधकार' में ही किए जाते हैं ।**

**हउ विचि सचिआरु कूड़िआरु ।।**
**हउ विचि पाप पुंन वीचारु ।।** (पृ. ४६६)

जन्मों – जन्मों से जीव इस **'भ्रम – भुलाव'** में विचरता हुआ **'मैं – मेरी' का अभ्यास करता आया है ।** इस लंबे समय के अटूट अभ्यास द्वारा हमारा यह **'भ्रम – भुलाव' हमारे अंतःकरण में दृढ़ ही नहीं हुआ अपितु हमारा 'संस्कार' अथवा जीवन रूप ही बन गया है ।**

जैसा सेवै तैसो होइ ।। (पृ २२४)

**As you think, so you become.**

इस का मतलब यह है कि **मूल मानसिक भ्रम में से ही सारा 'संसार' अथवा त्रि – गुणी मायिकी मंडल उत्पन्न हुआ है,** जिस में जीव सहज – स्वभाव ही प्रवृत हो रहे हैं ।

इस संसार का दूसरा नाम **'भ्रम' कहा जा सकता है** – तभी इस को **'सहिसा इह संसार'** भी कहा गया है ।

**भरमै आवै भरमे जाइ ।।**
**इहु जगु जनमिआ दूजै भाइ ।।** (पृ १६१)

यद्यपि हम सभी एक ही दृष्टमान दुनिया में बसते हैं, परंतु हर एक जीव ने **अपने – अपने भ्रम की 'रंगत' अनुसार, अपनी – अपनी अलग दुनिया की कल्पना की हुई है ।**

यही कारण है कि हम **एक दूसरे की मनोकल्पित दुनिया में झाँक नहीं सकते** और एक – दूसरे के ख्यालों, निश्चयों, भावनाओं को पूरी तरह नहीं समझ सकते, जिस कारण जीवन के हर पक्ष में **हमारे आपस में वाद – विवाद, टकराव, झगड़े और लड़ाइयाँ होती रहती हैं ।**

हमारे दिमागी ज्ञान की **'खोज'** भी 'कुएँ के मेंढक' की तरह केवल त्रि – गुणी मायिकी मंडल के **'भ्रम – गढ़' तक सीमित है ।** इस से ऊपर आत्म – मंडल का ज्ञान हमारी **अलप बुद्धि की पकड़ से दूर है ।**

सब जीवों के ख्याल, ज्ञान, निश्चय उनके **भ्रमों की 'रंगत' अनुसार भिन्न – भिन्न होते हैं,** जिस कारण इनके बीच वाद विवाद तथा **वैर – विरोध अनिवार्य है ।**

परंतु आत्मिक **'तत् – ज्ञान' का एकमात्र स्त्रोत 'आत्म – प्रकाश' ही है,** जिस में मानसिक भ्रम – भुलाव के **'अँधकार' के लिए कोई जगह नहीं ।** इसी आत्म – प्रकाश के 'तत्त – वेत्ता' (ज्ञाता) गुरमुख जन **ईश्वरीय 'प्रीत – डोरी' में पिरोए होते हैं ।** वे प्रेम – स्वैपना में विचरण करते हैं और **उन की 'सबके' साथ**

**'बन' आती है ।**

ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ।। (पृ. १२६६)

**ना को मेरा दुसमनु रहिआ न हम किस के बैराई ।।**
ब्रहमु पसारु पसािओ भीतरि सतिगुर ते सोझी पाई ।। (पृ. ६७१)

**ना को दुसमनु दोखीआ नाही को मंदा ।।**
गुर की सेवा सेवको नानक रवसमै बंदा ।। (पृ. ४००)

परंतु, यह अति – उच्च आत्मिक अवस्था की प्राप्ति **'अन्तर – आत्म में 'अनुभव प्रकाश' के साथ ही हो सकती है ।**

जब तक मायिकी भ्रम – भुलाव दूर नहीं होते – हम अपनी – अपनी भ्रम की रंगत वाले अलग – अलग दृष्टिकोण से ही हर एक चीज़ को देखते, समझते, परखते, बूझते और परिणाम निकालते हैं । इसी कारण किसी एक वस्तु या विषय के बारे में हमारे ख्याल, राय, फैसले **भिन्न – भिन्न होते हैं,** जिस की वजह से हमारे अंदर अविश्वास, वाद – विवाद और **वैर – विरोध अनिवार्य है ।**

निस्संदेह गुरबाणी के आशय अनुसार मानसिक भ्रम के 'अँधकार' को दूर करने का सच्चा और आसान साधन – **गुरप्रसादि, 'साधसंगति' और 'नाम – सिमरन' ही है ।**

गुर परसादी भ्रमु भउ भागै एक नामि लिव लाई ।। (पृ. १२६०)

आत्मिक मंडल का ज्ञान केवल **दैवीय अनुभव** द्वारा ही जाना, बूझा, सीझा, अनुभव किया जा सकता है ।

परमार्थ अथवा **'आत्मिक मंडल' के विषय में ज्ञान और निश्चय –**

पढ़ा – पढ़ाया
सुना – सुनाया
समझ – समझाया
ऊपरी
अधूरा
गलत

दिमागी कल्पनाओं तक सीमित है ।

हम इसी ऊपरी, अधूरे, 'मनोकल्पित ज्ञान' पर **संतुष्ट ही नहीं अपितु गर्व करते फिरते हैं** और इसी अधूरे **'मनोकल्पित ज्ञान' का ही प्रचार करते हैं ।** गुरबाणी में इस के विषय में यूँ ताड़ना की गई है –

कथनी बदनी करता फिरै हुकमै मूलि न बुझई अंधा कचु निकचु ।। (पृ. ५०६)

**कथनी कहि भरमु न जाई ।।**
**सभ कथि कथि रही लुकाई ।।** (पृ. ६५५)

कथनी बदनी करता फिरै हुकमु न बूझै सचु ।। (पृ. ६५०)

जिस तरह **'अँधेर कोठड़ी'** में हम ठोकरें खाते हैं और दुख – क्लेश भोगते हैं इसी तरह त्रि – गुणी मायिकी मंडल के **भ्रम – गढ़ में हम सारी उमर अपने मानसिक भ्रम – भुलावों में अँधकार ढोते हैं** और अनेक गलत निश्चयों द्वारा कर्म करते हैं जिनका परिणाम हमें भुगतना पड़ता है ।

भरमे भूला दुखु घणो जमु मारि करै खुलहानु ।। (पृ. २१)

**अंधकार सुखि कबहि न सोई है ।।** (पृ ३२५)

त्रै गुण माइआ भरमि भुलाइआ हउमै बंधन कमाए ।।
जंगणु मरणु सिर ऊपरि ऊभउ गरभ जोनि दुखु पाए ।। (पृ. ६०४)

मनमुख दुखीए सदा भ्रमि भुले तिन्ी बिरथा जनमु गवाइआ ।। (पृ ८५२)

हम अहम के **'मानसिक भ्रम'** में ही चिवरण करते हुए, अपने 'कर्म – धर्म द्वारा **'मुक्ति'** ढूँझते हैं – परंतु गुरबाणी निर्णय देती है कि जब तक हमारा मानाकि **'भ्रम – गढ़' नहीं टूटता** – तब तक **'मुक्ति' की प्राप्ति नहीं हो सकती ।**

जब लगु तुटै नाही मन भरमा तब लगु मुकतु न कोई ।। (पृ. ६८०)

**यह मानसिक भ्रम – गढ़ अति सबल है ।** जिस तरह अँधकार को हम खुद दूर नहीं कर सकते, परन्तु प्रकाश होने से अपने आप दूर हो जाता है । इसी तरह **मानसिक 'भ्रम – गढ़' भी हम अपने आप नहीं तोड़ सकते ।** इसे तो गुरू की कृपा द्वारा 'अनुभवी प्रकाश' से ही तोड़ा जा सकता है ।

**गुर मिलि जीता हरि हरि कीता तूटी भीता भरम गड़ा ।।** (पृ. ४५३)

भरमु कोटु माइआ खाई कहु कितु बिधि तोड़ीऐ ।।
**गुरु पूरा आराधि बिखम दलु फोड़ीऐ ।।** (पृ ५२२)

जिस तरह **प्रकाश की अनुपस्थिति से अँधकार उत्पन्न होता है,** उसी तरह **अहम की भ्रम – भुलाव, आत्मिक प्रकाश की अनुपस्थिति अथवा परमात्मा की 'भूल' में से उत्पन्न हुआ है ।**

'प्रकाश' एवं 'अँधकार' आपस में **'विरोधी'** अंश हैं और इकट्ठे नहीं हो सकते।

चरण कमल रिद माहि समाए तह भरमु अंधेरा नाही ।। (पृ. ४६६)

हउमै नावै नालि विरोधु है दुइ न वसहि इक ठाइ ।। (पृ. ५६०)

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही ।। (पृ. ६५७)

**अहम के अँधकार में से ही सारे भ्रम – भुलाव उतपन्न होते हैं** और इन भ्रम – भुलावों में ही, हम **कर्म – बद्ध होकर**, सारी उम्र अँधकार के 'भ्रम – गढ़' में ही पलच – पलच कर जीवन व्यतीत रहे हैं।

मनमुख अगिआनी कुमारगि पाए ।।
हरि नामु बिसारिआ बहु करम दृड़ाए ।।
भवजलि डूबे दूजै भाए ।। (पृ. २३१)

**मनमुखि भूले सभि मरहि गवार ।।**
**भवजलि डूबे न उरवारि न पारि ।।** (पृ. ६६५)

परंतु हमें इस बात की **सूझ ही नहीं**, और इस **भ्रम – गढ़ में विचरण करने की ही 'सयानप' समझे हुए हैं** और 'कुएँ के मेंढक की तरह, इस में पूर्ण रूप से संतुष्ट ही नहीं बल्कि गर्व अनुभव करते हैं।

कूपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ ।।
ऐसे मेरा मनु बिखिआ बिमोहिआ कछु आरा पारु न सूझ ।। (पृ. ३४६)

इस लिए हमें इस **अँधेर – खाते में से निकलने का कभी ख्याल ही नहीं आया।** यदि सत्संगति करते हुए किसी को मोह – माया के अँधकार में से निकलने का ख्याल आता भी है, तो इस प्रति हमारे प्रयत्न भी 'अहम' पर आधारित होते हैं – जिस कारण हमारी **अहम – मयी साधना निष्फल जाती है**। गुरबाणी इस बात को यूँ स्पष्ट करती है –

**हउ हउ करते करम रत ता को भारु अफार ।।**
**प्रीति नही जउ नाम सिउ तउ एऊ करम बिकार ।।** (पृ. २५२)

**कोटि करम करै हउ धारै ।। सम्र पावै सगले बिरथारे ।।** (पृ. २७८)

**तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु ।।**
**नानक निहफलु जात तिह जिउ कुंचर इसनानु ।।** (पृ. १४२८)

अँधकार अपने आप को **'देख' या 'बूझ' नहीं सकता। प्रकाश की रोशनी से ही 'अँधकार' की झूठी हस्ती को बूझा जा सकता है**। उसी तरह त्रि – गुणी

**मायिकी भ्रम – भुलाव को हम अपने आप नहीं बूझ सकते । आत्म प्राप्ति होने पर ही इस भ्रम – भुलाव के भेद का पता लगता है एवं सारे भ्रम अपने आप ही उड़ जाते हैं ।**

इहु जगतु भरमि भुलाइआ विरला बूझै कोइ ।। (पृ ५५८)

हउमै वडा गुबारु है हउमै
विचि बुझि न सकै कोइ ।। (पृ ५६०)

बिनु बूझे सभु दुखु दुखु कमावणा ।। (पृ ७५२)

**अज्ञानता रूपी अँधकार से उत्पन्न अधूरे एवं गलत ख्यरल और निश्चय**

तथा

**आत्मिक प्रकाश का अनुभवी पूर्ण तत् – ज्ञान आपस में विरोधी और विपरीत होने अनिवार्य हैं ।**

इस त्रि – गुणी मायिकी भ्रम को हम अपनी अहम – मयी सीमित बुद्धि की **सयानप और फोकट ज्ञान द्वारा मिटाने के व्यर्थ प्रयत्न में ही सुतुष्ट हैं, परंतु गुरबाणी अनुसार यह सभी प्रयत्न व्यर्थ हैं –**

**कथनी कहि भरमु न जाई ।। सभ कथि कथि रही लुकाई ।।** (पृ. ६५५)

**बहुतु सिआणप भरमु न जाए ।।** (पृ १०२५)

**जउ लउ रिदै नही परगासा तउ लउ अंध अंधारा ।।** (पृ १२०५)

जिस तरह प्रकाश की 'रोशनी' से ही अँधकार दूर होता है, उसी तरह यह त्रि – गुणी मायिकी 'भ्रम' **केवल अनुभवी आत्म – प्रकाश द्वारा ही मिटाया जा सकता है ।**

अंधकार महि रतनु प्रगासिओ मलीन बुधि हछनई ।। (पृ ४०२)

**नानक गुरमुखि गिआनु प्रगासिआ ।।**
**तिमर अगिआनु अंधेरु चुकाइआ ।।** (पृ. ८५१)

**गुर गिआन अंजनि काटिओ भ्रमु सगला**
**अवरु न दीसै एक बिना ।।** (पृ १०७६)

(क्रमशः.....)